P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-6* February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

खाद्य सुरक्षा एवं वस्तु विक्रय अधिनियम के अंतर्गत उपभोक्ता अधिकार : एक अध्ययन

राकेश कुमार
शोध छात्र,
अर्थशास्त्र विभाग,
बी.आर.ए. बिहार
विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर, बिहार, भारत

सारांश

उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण के युग में बाजार काफी प्रतिस्पर्द्धा के दौड़ से गुजर रहा है। इस प्रतिस्पर्द्धा उपभोक्ता को वस्तुओं को चुनने की आजादी अवश्य मिली है और वे चुनते भी हैं। लेकिन समस्या तब उत्पन्न हो जाती है जब ग्राहकों के साथ विक्रेता वादा खिलाफी करता है और भ्रामक विज्ञापन का सहारा लेकर ग्राहकों को चूना लगा जाता है। इस समस्या से निपटने के लिए ग्राहकों को जागरुक रहना जरुरी होता है ताकि ग्राहकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए विभिन्न स्तरों पर सरकार द्वारा लाये गये अधिनियमों में वर्णित प्रावधानों का उपयोग कर अपने अधिकारों की सुरक्षा कर सके। ऐतिहासिक रूप से देखें तो औपनिवेशिक भारत में व्यापक उपभोक्ता के अधिकारों की सुरक्षा के लिए वस्तु विक्रय अधिनियम 1930 लाया गया था जिसमें उपभोक्ता के अधिकारों को सुरक्षा दी गई। उपभोक्ता द्वारा किसी भी वस्तु के पसंद या नापसंद, भ्रामक विज्ञापन, गुणवत्ता मानक पर खड़े नहीं उतरने के कारण उसे अस्वीकार करने, वस्तुओं को वापस करने आदि जैसे अधिकार दिये गये। प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान खाद्य सामग्री के उत्पादन ने लोगों को खाद्य सुरक्षा मुहैया कराने के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली जैसे विचारों को अपनाया गया। इसके अलावा विशेष रूप से उपभोक्ता के अधिकारों की सुरक्षा के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 लाया गया और बदलते परिवेश के कारण कई परिवर्तन भी किये गये।

मुख्य शब्द : उपभोक्ता अधिकार, वस्तु विक्रय अधिनियम, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के अधीन शिकायतकर्त्ता और शिकायतें, गलत व्यापारी गतिविधियाँ, दोषपूर्ण वस्तुएँ, उपभोक्ता सुरक्षा परिषद्।

प्रस्तावना

स्वतंत्रता के पूर्व सरकार ने युद्ध के समय के अतिरिक्त किसी भी समय मूल्य नीति को नहीं अपनाया था, और न ही किसी प्रकार का नियंत्रण किसी भी वस्तु पर लगाया गया था। राशनिंग प्रणाली को सरकार ने जनता के सम्मुख द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान रखा। इसके पूर्व तो सरकार ने इस ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया और न ही उस समय इस प्रकार की कोई प्रणाली प्रचलित ही थी। स्वतंत्रता के पश्चात् सरकार ने खाद्य सामग्री खरीद समिति 1950 के द्वारा खाद्य नीति को अपनाया, जिसे एकाधिकारी खरीद एवं राशनिंग व्यवस्था पर बल दिया गया। यह संस्तुति उचित खाद्य स्थिति की पूर्ति को बनाए रखने के लिए की गई थी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान खाद्य सामग्री के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई। इसका परिणाम यह हुआ कि सरकार ने सार्वजनिक वितरण के सम्बन्ध में जो भी सम्भव था, उसको अपनाया। 1955–56 में आवश्यक वस्तुओं की कमी का अनुभव किया जाने लगा, और इसके मूल्यों में भी बहुत तेजी के साथ वृद्धि होने लगी। इससे निपटने के लिए सरकार ने 1957 में एक खाद्य समिति श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में नियुक्ति की। इसका कार्य यह था कि वह मूल्यों में बढ़ने के कारणों का पता लगावे। उत्पादन के बढ़ने पर भी मूल्यों में वृद्धि क्यों होती है? समिति को सरकार को समय–समय पर सलाह भी देना था कि किन कारणों से असामयिक रूप से जमा खोरी बढ़ती है। इस समिति का विचार यह था कि जब तक सरकार व्यापार पर पूर्ण सामाजिक नियंत्रण नहीं करती तब तक वह मूल्यों में स्थायित्व नहीं ला सकती। थोक व्यापारी जब अपने मूल्यों को बढ़ा देंगे तो फुटकर व्यापारियों को तो अपने मूल्यों को बढ़ाना ही पड़ेगा। इसके सुझाव में यह भी था कि खाद्य सामग्री के मूल्यों में स्थायित्व लाने के लिए खाद्य सामग्री का बंपर स्टॉक काफी हद तक सहायता प्रदान करेगा। यह मूल्यों में स्थायित्व लाने में एक यंत्र के रूप में कार्य कर सकता है।[1]

कहना न होगा कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली का मुख्य उद्देश्य 1960–70 के दशक में खाद्य–दुर्लभता के समय उपभोक्ता के लिए एक कीमत आलम्बन कार्यक्रम का काम करना था। अतः इस प्रकार यह कीमत–स्थिरीकरण (Price Stabilisation) के उपकरण के रूप में कार्य करने लगी और निजी व्यापारियों के विरुद्ध एक प्रतिशक्ति के रूप में उभरी क्योंकि व्यापारी दुर्लभता की स्थिति का फायदा उठाते हुए अपने लाभ को अधिकाधिक करने का प्रयास करते थे। इसका मूल उद्देश्य अनिवार्य वस्तुओं अर्थात् चावल, गेहूँ, चीनी, खाद्य तेल, सॉफ्ट कोक और मिट्टी का तेल साहाय्यित दरों (Subsidized Rates) पर उपलब्ध कराना था।[2]

1980–90 के दशक के मध्य में सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System) का विस्तार कुछ राज्यों में ग्राम क्षेत्रों में किया गया। इस प्रकार इसे कल्याणकारी कार्यक्रम का दर्जा दिया गया। 1985 में यह प्रयास किया गया कि सभी जनजाति ब्लॉकों में जिनकी जनसंख्या लगभग 5.7 करोड़ है, सस्ती दर पर खाद्यान्न उपलब्ध कराए जायें। देश में आज 4.62 लाख उचित मूल्य की दुकानों का नेटवर्क बन गया है जो 30,000 करोड़ रुपये की वस्तुएँ प्रति वर्ष वितरित करती है। अतः भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली संभवतः विश्व में सबसे बड़ा वितरण–नेटवर्क (Distribution Network) है। कई रोजगार जनन कार्यक्रमों में मजदूरी के अंग के रूप में साहाय्यित खाद्यान्न वितरित किये गये।[3]

उपभोक्ता अधिकारों के संबंध में कहा जाए तो सरकार द्वारा कुछ ऐसे कानून की व्यवस्था की गयी है जिसके माध्यम से उपभोक्ता के अधिकार की रक्षा हो सके। जैसा कि अगर कोई उपभोक्ता किसी वस्तु का क्रय कर लेता है और उसे उस वस्तु की गुणवत्ता में कमी आती है, तो उपभोक्ता को यह अधिकार है कि उस वस्तु को वो अस्वीकार कर सकते हैं। व्यापक उपभोक्ता अधिकारों के लागू होने से पहले ही औपनिवेशिक काल में वस्तु विक्रय अधिनियम 1930 लागू किया गया था जिसके अंतर्गत लोगों द्वारा वस्तुओं के खरीद से संबंधित कुछ अधिकारों को रक्षा का प्रावधान रखा गया था।

वस्तु विक्रय अधिनियम के अंतर्गत पहले किसी भी वस्तु को खरीदने के बाद उस वस्तु की अगर गुणवत्ता में कमी आती थी तो उसे अस्वीकार किया जाता था। उसे उपभोक्ता को मजबुर होकर उसे नहीं रखना पड़ता था। कुछ ऐसी भी बात थी यदि उस वस्तु के विक्रेता उत्पादकता हो या न हो उसे इन वस्तुओं के खिलाफ विरोध करने के लिए कठिन प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। इस तरह उपभोक्ता को ऐसी स्थिति में कुछ अन्य अधिकारों में यह अधिनियम क्रेता को लेन–देन की स्थिति में कुछ सुरक्षा भी प्रदान करती है।[4]

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के अधीन शिकायतकर्त्ता और शिकायतें

जहॉ तक शिकायतकर्त्ता की बात है तो हमें यह मालूम होता है कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के एक उल्लेखनीय भाग शिकायत प्रणाली से संबंधित प्रावधान है, जो उपभोक्ताओं को राहत प्रदान करती है। इस अधिनियम के अनुसार शिकायतकर्त्ता की व्याख्या की गई है। जिसके माध्यम से लोगों के बड़े समुह या संगठन शिकायतकर्त्ता हो सकते हैं।

शिकायत दर्ज कराने की प्रक्रिया

वैसे उपभोक्ता शिकायत दर्ज करा सकते हैं जो या तो खुद प्रभावित हुआ हो या पंजीकृत उपभोक्ता संगठन या जहॉ पर उपभोक्ता समूहों का समान हित हो या केन्द्रीय एवं राज्य संगठनों द्वारा। इसके लिए शुल्क की राशि क्रमशः एक लाख पर सौ रुपया, पॉच लाख तक की राशि पर दो सौ रुपये, दस लाख तक की धनराशि पर चार सौ रुपये तथा बीस लाख रुपये तक की धनराशि पर पॉच सौ रुपये का बैंक ड्राफ्ट अथवा पोस्टल ऑर्डर द्वारा जो अध्यक्ष जिला फोरम के नाम देय होगा, जमा करानी होगी। शिकायत सादे कागज पर विपक्षी गण के नाम व पते सहित शिकायत का विवरण देते हुए जो अनुतोष मॉगा गया है उसके उल्लेख के साथ संबंधित साक्ष्य की फोटो प्रतियॉ संलग्न करके तीन प्रतियों में जिला फोरम में प्रस्तुत की जानी चाहिए। शिकायत के लिए वकील की अनिवार्यता नहीं है और शिकायत स्वयं अथवा अपने प्रतिनिधि द्वारा दर्ज कराई जा सकती है। प्रारम्भ में शिकायत को सुनवाई हेतु स्वीकार करने पर विचार किया जा सकेगा और 21 दिन की अवधि में इस संबंध में आदेश पारित किये जायेंगे। इस अवधि में शिकायतकर्ता को अपना पक्ष रखने का पर्याप्त समय दिया जायेगा।

शिकायत दर्ज होने के उपरांत की प्रक्रिया

उपभोक्ता द्वारा शिकायत दर्ज कराने के पश्चात् विपक्षी यानि जिसके खिलाफ शिकायत दर्ज करायी गई है उसे इस शिकायत की जानकारी दी जाती है जिसे एक माह की अवधि में अपना उत्तर प्रस्तुत करने के निर्देश दिये जायेंगे। जिसे मात्र 15 दिनों के लिए बढ़ाई जा सकती है। दोनों पक्षों को सुनवाई का समुचित अवसर देने के उपरांत जिला फोरम द्वारा शिकायत का निस्तारण यथासम्भव तीन माह की अवधि में किया जायेगा। यदि शिकायत के आधार पर किसी वस्तु पदार्थ या माल के तकनीकी अथवा लेबोरेट्री परीक्षण की आवश्यकता अनुभव होती है तो संबंधित मान्यता प्राप्त लेबोरेट्री को संबंधित वस्तु/पदार्थ भेजा जायेगा ऐसे मामलों में शिकायत का निस्तारण पॉच महीने की अवधि में होगा तथा सामान्यतः शिकायत का निवारण तीन महीने में किया जा सकता है। 30 मई 2005 को निर्गत विनियमों में यह प्रावधान किया गया है कि शिकायतों की सुनवाई में सामान्यतः स्थगन न दिया जाए तथा केवल अति आवश्यक मामलों में यदि स्थगन देना पड़े तो द्वितीय पक्ष को व्यय के रूप में कम से कम 500 रुपये की धनराशि दिलाने की व्यवस्था की जाए। इस तरह देखा जाय तो उपभोक्ताओं के शिकायतों के निवारण हेतु अधिनियम में पर्याप्त व्यवस्था की गई है और यह उपभोक्ताओं के अधिकारों की रक्षा के क्षेत्र में मील का पत्थर साबित भी हुआ है।

उपभोक्ता के अधिकारों के संरक्षण के अन्तर्गत दिये गये न्यादेशों से यदि शिकायतकर्ता असंतुष्ट है तो वह आगे अपील में जा सकता है नहीं तो पारित आदेश अंतिम होगा। कार्य के कारण प्रारंभ होने के समय से दो

वर्ष की अवधि में शिकायत दर्ज कराये जाने की समय सीमा निर्धारित है।

उपभोक्ता के शिकायतों के निपटाने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत तीन मुख्य आधारों की चर्चा की गयी है।

धारा–24

अपील न होने की स्थिति में पारित आदेश अंतिम होगा। कार्य के कारण प्रारम्भ होने के समय से दो वर्ष की अवधि में शिकायत दर्ज कराये जाने की समय सीमा निर्धारित है।[5]

उपभोक्ता के शिकायतों के निपटाने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के अंतर्गत तीन मुख्य आधारों की चर्चा की गई है–

प्रतिबंधित व्यापारिक गतिविधियॉ

इसमें अपनी वस्तुओं के उपयोग एवं निर्गत करने या सेवाओं को बचाने के लिए किसी भी तरह की धोखेबाजी की कार्रवाई को प्रतिबंधित व्यापारिक गतिविधि माना जायेगा। व्यापारी की ओर से लिखित या मौलिक प्रस्तुतीकरण द्वारा झूठी वस्तु प्रस्तुत कर गलत व्यापारिक गतिविधियॉ करते है। ऐसे प्रस्तुतीकरण या वक्तव्य कुछ निश्चित वस्तु या सेवा के मानक, गुण, श्रेणी, मॉडल आदि से संबंधित हो सकते हैं। कभी–कभी व्यापारियों द्वारा झूठी पेशकशों जैसे एक के साथ एक मुफ्त अधिक छूट, मुफ्त डिलेवरी एवं पुराने के बदले नये सामान देने की पेशकश आदि में व्यापारी द्वारा झूठा प्रस्तुतीकरण किया जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि उपभोक्ता गंभीरतापूर्वक ऐसी पेशकशों की जॉच कर और धोखेबाजी से बचे।

दोषपूर्ण वस्तु

सीपीए 1986 अधिनियम के धारा 21 (1) (p) वस्तुओं के किसी दोष, गुणो, संख्याओं क्षमताओं, शुद्धताओं, मानकों आदि में कमी के आधार पर दोषपूर्ण वस्तु की व्याख्या करता है। वस्तु निर्माता या व्यापारियों के तरफ से किसी भी प्रकार के दोषपूर्ण समान की प्राप्ति होने पर उपभोक्ता उपयुक्त फोरम के पास मुआवजे की अपील कर सकता है।

सेवा की गुणवत्ता में कमी

सीपीए 1986 धारा 2(1)(N) के अनुसार सेवा में आए किसी प्रकार के दोष, अक्षमता, गुणों में कमी प्रकृति में कमी मानक तथा भूमिका में कमी जिसमें सुधार की गुंजाइश हो दोषपूर्ण सेवा के अंतर्गत आता है। इसलिए दोषपूर्ण सेवा का विस्तार बिक्री प्रमाण–पत्रों से लेकर परीक्षण प्रधिकरण द्वारा जॉचों के जॉच परिणाम देरी से निकलने तक है।[6]

उपभोक्ता संरक्षण परिषद्

उपभोक्ता जागरुकता फैलाने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत केन्द्रीय एवं राज्य स्तरों पर उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना करने का प्रावधान है। अधिनियम के अनुसार परिषदों का उद्देश्य उपभोक्ताओं के अधिकारों को प्रोत्साहित करना और उसकी रक्षा करना है। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम केन्द्र सरकार को केन्द्रीय उपभोक्ता सरक्षण परिषद् की स्थापना करने की शक्ति प्रदान करता है, जिसमें केन्द्र सरकार में उपभोक्ता मामले के प्रभारी मंत्री अध्यक्ष होंगे और ऐसे निर्धारित किये गये हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य सरकारी और गैर सरकारी सदस्य होंगे एवं परिषद् की अवधि तीन वर्ष की होगी। राज्य स्तर पर राज्य सरकारों द्वारा राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना का प्रावधान है। राज्य परिषद् में राज्य सरकार में उपभोक्ता कार्य के प्रभारी मंत्री अध्यक्ष के रूप में तथा राज्य सरकार द्वारा निर्धारित हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए अन्य सरकारी और गैर सरकारी सदस्य तथा केन्द्र सरकार के 10 नामित होंगे। जिले के अंतर्गत जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद् के अध्यक्ष जिला कलेक्टर होंगे तथा राज्य सरकार द्वारा निर्धारित ऐसे हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए अन्य सरकारी और गैर सरकारी सदस्य होंगे।[7]

निष्कर्ष

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट होता है कि खाद्य सुरक्षा एवं वस्तु विक्रय अधिनियम के अंतर्गत प्राप्त उपभोक्ता अधिकार ऐसे अधिकारों की महत्वपूर्ण व्यवस्था के बिना ही यह महत्वपूर्ण प्रकृति का हो गया। पहले उपभोक्ता के अस्वीकार के अधिकार सिर्फ वस्तु की खरीद से संबंधित ही थे। एक बार वस्तु खरीदने पर तथा उपभोक्ता द्वारा उसमें कुछ खामियॉ पाये जाने पर वह खरीद के बाद की स्थिति में उसे अस्वीकार नहीं कर सकता। इस संबंध में वस्तु विक्रय अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत उपभोक्ता को जिससे वस्तु खरीदी गई हो, चाहे वह वस्तु निर्माता हो या न हो, के खिलाफ कानूनी लड़ाई के लिए कठिन प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। उपभोक्ता के अन्य अधिकारों में यह अधिनियम खरीददार को ऐसी लेन–देन की स्थिति में कुछ शर्तों एवं स्थितियों में सुरक्षा भी प्रदान करता है। जबकि खरीददारों के ऐसे अधिकार को सामान्यतः विक्रय द्वारा भूल–चूक लेनी देनी के लिए माफी मॉगे जाने के द्वारा शून्य कर दिया जाता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *के.एन. काबरा, द पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम इन इंडिया, ईस्टर्न बुक, न्यू दिल्ली, 2012, पृ. 81.*
2. *ब्रज. के. तैमिनी, फूड सिक्यूरिटी इन द ट्वेन्टी फर्स्ट सेन्चुरी, कोणार्क पब्लिशर्स, न्यू दिल्ली, 2001*
3. *कुलवंत सिंह पठानिया, द पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम इन इंडिया, कनिष्क, दिल्ली, 2005, पृ. 68–69.*
4. *पी.के. दत्त, कंज्यूमरिज्म एण्ड कंज्यूमर प्रोटेक्शन इन इंडिया, हिमालय पब्लिशिंग, न्यू दिल्ली, 2015.*
5. *https://himwikipedia.org*
6. *www.civilhindipedia.com*
7. *archieve.india.gov.in/business/hindi/consumer-rights/ consumer-protection.*